ISSN 2278 - 0327

वर्तमान परिदृश्य में मानवाधिकार एवं पर्यावरण शिक्षा की प्रासंगिकता

रजनीकांत दीक्षित
शोधार्थी
शिक्षाशास्त्र विभाग
ख़्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती भाषा विश्वविद्यालय, लखनऊ

प्रो. चंदना डे
विभागाध्यक्ष
शिक्षाशास्त्र विभाग
ख़्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती भाषा विश्वविद्यालय, लखनऊ

शोध सार

मानव अधिकार और पर्यावरण दोनों परस्पर अंतर्निहित अवधारणाएं है। एक व्यक्ति के जीवन जीने के अधिकार एवं पर्यावरण जिसमें व्यक्ति रहता है के बीच स्पष्ट संबंध व्याप्त है। मानव अधिकार पर्यावरण की सुरक्षा को बढ़ावा दे सकते हैं और पर्यावरण कुछ हद तक प्रकृति के तत्व के रूप में मनुष्यों की रक्षा कर सकता है। यद्यपि पर्यावरण की रक्षा के लिए मानव अधिकारों का समुचित ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक प्रतीत होता है क्योंकि जब तक हमें मानव अधिकारों का ज्ञान नहीं होगा तब तक यह संभव नहीं है कि हम पर्यावरण के संरक्षण के लिए प्रयत्न कर सके। यह लेख पर्यावरण अधिकारों के क्षेत्र में भविष्य के संभावित विकास के बारे में उत्पन्न प्रश्न का उत्तर देने का प्रयत्न करता है। इसके साथ साथ हमे वर्तमान समय में पर्यावरण एवं मानवाधिकार के संबंध में जागरूक बनाने का प्रयास करता है।

बीज शब्द- मानवाधिकार, पर्यावरण संरक्षण, पर्यावरण कानून, मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा

पर्यावरण संबंधी भारतीय दृष्टिकोण-

पर्यावरण शब्द का शाब्दिक अर्थ दो शब्दों यथा परि+आवरण से मिलकर बना है। हमारे चारों ओर के भौतिक एवं अभौतिक वातावरण के आवरण को हम पर्यावरण कहते हैं। पर्यावरण मानव से किस रूप में सम्बद्ध है इसका ज्ञान हम इसकी विभिन्न शाखाओं के विभाजन के द्वारा ज्ञात कर सकते हैं। यथा- जैविक पर्यावरण, भौतिक पर्यावरण, सामाजिक पर्यावरण, सांस्कृतिक पर्यावरण, आध्यात्मिक पर्यावरण, राजनैतिक पर्यावरण, मानसिक पर्यावरण, आर्थिक पर्यावरण आदि तक इसकी पहुँच हमें पुनः चिन्तन पर विवश करती है कि मानव का कोई भी अंग पर्यावरण से अछूता नहीं है अर्थात् यह अतिश्योक्ति नहीं होगी कि इसके बिना मानव का अस्तित्व ही नहीं है। इसके अस्तित्व के संरक्षण हेतु चिंतन का प्रारम्भ प्रकृति के जन्म के साथ ही प्रारम्भ हो गया होगा परन्तु ज्ञात प्राचीन साक्ष्यों में हमारे वेदों में इसके संरक्षण एवं संवर्द्धन हेतु स्पष्ट गम्भीर चिंतन प्रदर्शित किया गया है ।

पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्ण मुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते।।

अर्थात् हम प्रकृति से उतना ग्रहण करें जितना हमारे लिये महत्वपूर्ण हो, आवश्यक हो और साथ ही प्रकृति की पूर्णता को क्षति न पहुँचे । वेदों में कहा गया है-

यत्ते भूमेविखनामि क्षिद्रं तदपिरोहतु।
मां तेमर्मविभृग्वरी या ते हृदयमर्पितम्।।

अर्थात् हे पृथ्वी माँ हमारे द्वारा जो भी खनिज पदार्थों का दोहन हो रहा है उसे आप शीघ्रता से पुनः प्रति पूर्ति कर दें ।

जल, वायु, ध्वनि, वर्षा, खाद्य, मिट्टी, वनस्पति आदि का जीवों हेतु कितना महत्व है ऋग्वेद में कहा गया है-

वातआवातुभेषणंमयोभुनोहृदे प्रणआयूंषितारिषत

अर्थात् शुद्ध ताजा वायु अमूल्य औषधि है, जो हमारे हृदय के लिये दवा के समान लाभकारी है। यह हमें दीर्घायु बनाती है।

अथर्वेद में कहा गया है भोजन और स्वास्थ्य देने वाली वनस्पतियाँ इस पृथ्वी के गर्भ से ही उत्पन्न होती है। पृथ्वी सभी की माता एंवं मेघ पिता है। अर्थात् प्रकृति एवं पुरुष का सम्बन्ध एक दूसरे पर आधारित है। वैदिक काल में ऋषि - मुनि पर्यावरण को लेकर कितने चिंतित थे इस श्लोक से जान सकते हैं-

पंचस्वन्तुपुरूष आविवेशातान्यन्तः पुरूषेआपैतानि

अर्थात् यदि वायु, जल, अग्नि, आकाश, पृथ्वी रूपी पंचतत्वों में से कोई एक भी दूषित हुआ तो उसका दुष्प्रभाव मानव जीवन पर अवश्य पड़ेगा। अतः उन्होनें इनके संतुलन को बनाये रखने हेतु अपील की।

अथर्वेद में कहा गया है अग्नि (यज्ञ) से धूम उत्पन्न होती है, धूम से बादल बनते हैं और बादलों से वर्षा होती है। वेदों में यज्ञ का तात्पर्य प्राकृतिक चक्र को साम्यावस्था में लाने की प्रक्रिया कहा गया है। वैज्ञानिक भी इस क्रिया से सहमत हैं कि यज्ञों के द्वारा आक्सीजन एवं कार्बन डाईआक्साइड में संतुलन स्थापित होता है।

मानवाधिकारों से हमारा तात्पर्य उन अधिकारों से है जो हमें जन्म से प्राप्त होते हैं अर्थात् जिनके बिना मानव का जीवन पशुतुल्य होगा जैसे स्वच्छ व शुद्ध भोजन पाने का अधिकार, शुद्ध वायु पाने का अधिकार, शुद्ध जल पीने का अधिकार, आत्म रक्षा का अधिकार, स्वस्थ चिंतन का अधिकार आदि। मानव में स्वभावत: अधिकारों को पाने की चेष्टा जन्मजात होती है जब कि कर्तव्यों के प्रति वह उदासीन है। अत: कर्तव्यों के बिना जो मौलिक अधिकार उसे जन्म से प्राप्त होने चाहिये उन पर ग्रहण लगना प्रारम्भ हो चुका है क्योंकि वो समस्त अधिकार प्रकृति प्रदत्त थे और पर्यावरण से ओत-प्रोत थे। अत: आज मानव जीवन का अस्तित्व खतरे में है तो उपरोक्त विवरण हमें यह सोचने पर विवश कर रहा है कि पर्यावरण के संरक्षण, संवर्द्धन एवं संतुलन हेतु हमारी नयी पीढ़ी को न केवल शिक्षित करना अत्यावश्यक है वरन् प्रकृति प्रदत्त प्राप्त मानवाधिकारों में आ रहे अवरोधों के कारणों, प्रभावों एवं युक्तियों को जानने हेतु पर्यावरण शिक्षा को मानवाधिकारों से जोड़कर यदि शिक्षा दी जाये तो निश्चित ही यह एक नवीन प्रयास होगा जो इस दिशा में एक मील का पत्थर सिद्ध होगा।

पर्यावरण प्रदूषण की विभीषिका का प्रत्यक्ष सम्बन्ध हमारे जीवन-मरण से सम्बद्ध है। मानव जीवन के मुख्य आधार जल, वायु, वनस्पतियां आदि का प्रत्यक्ष सम्बन्ध मानव से है । महाकवि कालिदास ने विश्वप्रसिद्ध ग्रन्थ 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' एवं 'मेघदूत' में मानव मन- मस्तिष्क पर पर्यावरण के प्रभाव को दर्शाया है। आचार्य कौटिल्य ने साम्राज्य की स्थिरिता एवं विकास में पर्यावरण को प्रमुख कारक माना है। लैमार्क एवं डार्विन जैसे विश्व प्रसिद्ध वैज्ञानिकों ने जीवों के विकास में पर्यावरण को सर्वोपरि माना है।

प्रकृति भारतीयों के लिए आदिकाल से पूजनीय रही है चाहे शारीरिक कान्ति प्राप्त करने हेतु सूर्य की उपासना हो या नारियों को अपने पतियों की दीर्घायु का वरदान मांगने हेतु वट वृक्ष की पूजा हो या लक्ष्मी प्राप्त करने हेतु पीपल के वृक्ष की उपासना हो। वेदों में वर्णित नदियों, सागरों, चन्द्रमा, सूर्य, जल, वायु, वनस्पतियों आदि सभी को धर्म से जोड़कर इनकी उपासना पर जोर दिया गया जो पर्यावरण के प्रति हमारी जागरूकता एवं समर्पण को प्रदर्शित करता है। अथर्वेद में वृक्षों एवं वनों को संसार के समस्त सुखों का स्रोत कहा गया है। वृहदारण्यक उपनिषद् में कहा गया है कि वृक्षों में जीवन का सार छुपा है। पहले वनों में पले हुए भरत जैसे महायोद्धाओं ने शेरों के दांत गिने। वैदिक धर्म के अनुसार परोपकारी प्रवृत्ति के जीवनदायी वृक्षों को काटने वाला अत्यन्त पतित होता है। वृक्ष हमारे जीवन की रक्षा करते है जैसे पर्वतों को अपनी मजबूत जड़ों से थामे रखते हैं, तूफानी वर्षा के वेग को रोके रखते हैं, पक्षियों को पोषित करते हुए पर्यावरण को सुखद एवं नीरोग बनाते हैं। ये अपरदन को रोकते नदियों को अनुशासित रखते हैं, ये वर्षा के कुशल संवाहक होते हैं । ऋग्वेद के अनुसार 'दश गुणवान पुत्रों का यश इतना ही, जितना एक वृक्ष का'।

पदमपुराण के अनुसार - 'जो मानव मार्गों के किनारे एवं जलाशयों के तट पर वृक्षारोपण करता है, वह उन वृक्षों की आयु के बराबर समय तक स्वर्ग में सुख प्राप्त करता है'

हमारे वेद हमें यह भी बताते हैं कि प्रत्येक जीवधारी अपने विकास और व्यवस्थित जीवनक्रम हेतु एक संतुलित पर्यावरण पर निर्भर रहते हैं। संतुलित पर्यावरण में प्रत्येक घटक एक निश्चित मात्रा में उपस्थित रहता है, जैसे ही इन घटकों में असंतुलन उत्पन्न होता है, वैसे ही समस्त जीवधारियों को प्राकृतिक विभीशिकाओं का सामना करना पड़ता है और यहीं से पर्यावरण को बचाने हेतु चिन्ता का प्रारम्भ होता है।

भगवान श्रीकृष्ण ने श्रीमद्भागवत् गीता में स्वयं को नदियों में भागीरथी (गंगा) तथा जलाशयों में समुद्र बताकर जल की महत्ता को स्वीकृति प्रदान की है। भारतीय संस्कृति में जल स्रोत मात्र निर्जीव जलाशय नहीं थे वरन वरूण देव, समुद्र देव तथा विभिन्न नदियों के रूप में उनकी अनेक देवियों माताओं की कल्पना की गयी थी। आज भी प्रत्येक वह व्यक्ति जो सनातन धर्म व भारतीय संस्कृति में विश्वास करता है, स्नान करते समय सप्त सिकाओं में जल के समावेश हेतु इस मंत्र द्वारा उनका आहवान करता है

गंगे च यमुने चैव गोदावरी सरस्वती।
नर्मदे सिन्धु कावेरी जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु।।

वैदिक काल में भी पर्यावरण के असंतुलन की समस्या उत्पन्न हुई थी ऐसा प्रतीत होता है क्योंकि समुद्र मंथन कुछ और नहीं था, बल्कि देवताओं एवं दैत्यों द्वारा प्रकृति का निर्दयतापूर्वक दोहन था, जिसमें अमृत साथ-साथ विश्व के रूप में प्रदूषण भी निकला था। आज के वैज्ञानिक उसकी तुलना जहरीली गैस फास्फीन से करते हैं। बृहदारण्यक उपनिषद् में कहा गया है कि पृथ्वी पर सृजन का मुख्य घटक जल ही हैं, जैसे पंचभूतों का रस पृथ्वी है, पृथ्वी का रस जल है, जल का रस औषधियों हैं, औषधियों का रस पुष्प हैं, पुष्पों का रस फल हैं, फलों का रस पुरुष हैं तथा पुरुष का रस वीर्य है जो सृजन का हेतु - हेतु है अर्थात सृजन का मूल आधार जल है ।

अत: यह स्पष्ट हो चुका है कि प्रकृति के मूल में जल ही है और उसी पर प्रदूषण का सर्वाधिक आधात है। पृथ्वी के चारों ओर 71 प्रतिशत भाग में जल ही जल है और इस जल का लगभग 97 प्रतिशत भाग समुद्रों में पाया जाता है, जो लवणीय एवं खारा है। अत: यह पीने योग्य नहीं है। शेष प्रतिशत भाग का अधिकांश भाग भूमिगत एवं वाष्प के रूप में है। अब जो पीने योग्य जल बचता है वह मात्र 1 प्रतिशत के लगभग है और उसका मानव ने क्या हस्र किया है इन ऑकड़ों से बताने का एक सामान्य प्रयास किया गया है-

- सामान्यत: 10 लाख व्यक्तियों पर 5 लाख टन सीवेज एक वर्ष में उत्पन्न होता है जिसका अधिकांश भाग समुद्र व नदियों में

जाता है।

- भारत में 1 लाख से ज्यादा आबादी वाले 142 शहरों में केवल 8 शहर ही ऐसे हैं, जिनमें सीवेज को नष्ट करने की पूर्ण व्यवस्थायें हैं।
- 62 शहर ऐसे हैं जहाँ व्यवस्थायें अत्यल्प हैं तथा 72 शहर ऐसे हैं जहाँ सीवेज के लिए किसी भी प्रकार की व्यवस्था नहीं है।
- आज भारत की लगभग 70 प्रतिशत नदियाँ पर्यावरण संकट की परिधि में हैं। भारतीयों की मुख्य धार्मिक नदी गंगा का लगभग 23 प्रतिशत भाग पूर्ण रूपेण प्रदूषित हो चुका है।
- दामोदर नदी में 40 लाख गैलन विषैला पानी कल - कारखानों द्वारा छोड़ा जाता है।
- चेन्नई शहर से बहकर लगभग 2 करोड़ गैलन अशुद्ध जल नदियों को प्रदूषित कर रहा है।
- श्रीनगर का 51 हजार किली 0 दूषित जल बहकर सीधे झेलम के अस्तित्व को चुनौती दे रहा है।
- जल में प्रवाहित इस गंदगी के कारण जहाँ सन् 1940 में एक लीटर जल में 25 घन सेमी0 ऑक्सीजन पाई जाती थी, वहीं आज यह घटकर मात्र 0.1 घन सेमी 0 प्रति लीटर रह गयी है।
- बढ़ते जल प्रदूषण से विश्व भर में समुद्रों में पाई जाने वाली 10 करोड़ टन मछलियों का अस्तित्व खतरे में हैं। मात्र पिछले 20 वर्षों में ही समुद्री जीवों की संख्या में 40 प्रतिशत की कमी पाई गयी है।
- आज जल प्रदूषण के दुष्परिणामों की विश्व स्तर पर झलक देखें तो जापान सर्वोत्तम उदाहरण होगा। जहाँ टोक्यो शहर के आस - पास प्रदूषण इतना अधिक है कि जल का फोटोग्राफ विकसित किया जा सकता है।
- जापान के ही योकाईची नगर में काफी बड़ी संख्या में लोग स्वास रोग से ग्रसित हो चुके हैं। यहीं पर जीत्सू नदी के तट पर होमू द्वीप के निवासियों की अस्थियाँ इतनी कमजोर हो चुकी हैं कि छू लेने मात्र से टूट रही हैं।

प्रदूषण तो बहुआयामी हो चुका है परन्तु यहाँ मात्र एक ही आयाम पर प्रकाश डाला गया है। पर्यावरण संतुलन बनाये रखने हेतु वैश्विक स्तर पर अनेक कानून बनाकर इसे बचाने हेतु प्रयास किये जा रहे हैं। भारत में भी संविधान निर्माण के समय से लेकर आज तक अनेक कानून बनाये गये और पर्यावरण की रक्षा एवं इसके महत्व पर भी हमें वैदिक काल से ही प्रेरणा प्राप्त होती चली आ रही है, परन्तु इसके उपरान्त भी कार्यरूप में जो परणति होनी चाहिए वह शायद अल्प है।

मानव का सर्वोपरि मानवाधिकार है जीवन का अधिकार, जिसका आशय मात्र पशुतुल्य जीवन जीने से नहीं है, अपितु गरिमामयी, स्वच्छ वातावरण में जीवन जीने से है। मानव जो कि प्रकृति का अभिन्न अंग है, अत: पर्यावरण के असंतुलित होते ही उसका गरिमामयी जीवन असंभव है। मानव को जन्म से ही कुछ प्रकृति प्रदत्त मानवाधिकार प्राप्त होते हैं, जैसे शुद्ध वायु, स्वच्छ जल, शुद्ध भोजन, स्वस्थ वनपस्पतियाँ तथा शान्तिपूर्ण वातावरण प्राप्त करने का अधिकार परन्तु यदि वह पर्यावरण को संतुलित करने में अपनी भूमिका या कर्तव्यों का निर्वहन नहीं करेगा, तो शायद यह मानवाधिकार उसे प्राप्त नहीं होंगे। आज विज्ञान के इस युग में ज्ञान के अहंकार में चूर मानव को शायद यह नहीं ज्ञात है कि यदि उसका जीवन ही नहीं होगा, तो उसका अस्तित्व कहाँ होगा ? वह यह जानता है कि पर्यावरण को इस दशा में पहुँचाने वाला वह स्वयं ही है परन्तु वह फिर भी जानकर अंजान बना है। अत: अब आवश्यकता है कि मानव में स्वयं के जीवन के प्रति संवेदना उत्पन्न की जाये और पर्यावरण की शिक्षा को मानवाधिकारों की शिक्षा तथा जीवन के अधिकार के रूप में प्रत्येक व्यक्ति को जागरूक किया जाये कि हमें शुद्ध जल प्राप्त करने का अधिकार, स्वच्छ वायु प्राप्त करने का अधिकार, पौष्टिक भोजन पाने का अधिकार मानसिक शान्ति प्राप्त करने का अधिकार तभी प्राप्त हो सकेगा जब हम पर्यावरण का संरक्षण व संवर्धन करने के लिए न सिर्फ तत्पर होंगे बल्कि अपने दैनिक जीवन में इससे सम्बन्धी कार्यों को क्रियान्वित करेंगे यथा-

- आवागमन हेतु ऊर्जा द्वारा चलित वाहनों पर निर्भरता को कम से कम करना।
- दैनिक प्रयोग की वस्तुओं हेतु अपने घर से थैला, बर्तन आदि का प्रयोग करना।
- मिट्टी के बर्तनों को अधिक से अधिक प्रयोग में लाना।
- ऐसी वस्तुओं प्रयोग से बचना जो घर में आकर कूड़े के आकार में वृद्धि करें।
- पेड़ - पौधों को ईश्वर के निवास के रूप में स्वीकार करना।
- नदियों को देवियों के रूप में पुन: महत्व प्रदान करना।
- पृथ्वी को माता स्वरूप में स्वीकार करना।
- गाय को पशु न मानकर माता के रूप में स्वीकार करना। पशुपालन को बढ़ावा देना।
- किसी के जन्म दिवस पर या विवाह की वर्षगांठ पर या अन्य किसी कार्यक्रम पर उपहार स्वरूप पेड़-पौधों को प्रदान करना एवं बदले में उनके पालन- पोषण करने का वचन प्राप्त करना।
- स्वयं के द्वारा भी प्रतिवर्ष विभिन्न अवसरों पर वृक्षारोपण करना एवं उनकी पुत्रवत देखभाल करना।
- भोजन बनाते समय, भोजन बनवाते समय एवं भोजन परोसते समय इस बात का अवश्य ध्यान रखें कि भोजन का एक भी निवाला हमारी अज्ञानता के कारण बर्बाद न हो, क्योंकि यह किसी अन्य के काम आ सकता है।
- अनावश्यक वस्तुओं, वस्त्रों, बर्तनों आदि पर रोक लगाना क्योंकि इससे जल की बचत करने में मदद मिलेगी।

- घर के प्रत्येक व्यक्ति को ऊर्जा उपभोग के आवश्यक प्रतिमानों हेतु प्रशिक्षित करना।
- वैवाहिक समारोहों में एवं त्यौहारों पर आतिशबाजी एवं ढोल नगाड़ों के प्रयोग को बंद करना।
- आमंत्रण देने हेतु कार्ड प्रथा को बंद करते हुए वैकल्पिक तरीके प्रयोग।
- कृषि में रासायनिक उर्वरकों एवं संकर प्रजाति के बीजों पर रोक।
- प्रत्येक परिवार को दैनिक उपभोग की साक-सब्जियों में आत्मनिर्भर बनाने हेतु प्रेरित करना।
- कापी - किताबों को चक्रीय प्रयोग में लाना।
- बच्चों को प्रोत्साहित करें कि अपने पुराने खिलौने ऐसे छोटे बच्चों को दे दें, जो उनका उपयोग कर सकें।
- बच्चे ही नहीं बल्कि प्रत्येक व्यक्ति को प्रेरित करें कि वह पुन: प्रयोग प्रक्रिया को प्रत्येक सामग्री के परिपेक्ष्य में चलन में लायें।
- घर के अन्दर दृश्य-श्रव्य उपकरणों की ध्वनि को कम रखें तथा समारोहों में लाउड स्पीकरों के बढ़ रहे चलन को कम करने में सहयोग करें।
- सार्वजनिक स्थलों को गंदा करने से पूर्व यह सोचे की यह आपके नागरिक कर्तव्यों के विपरीत है।

उपरोक्त विवरण के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि यदि पर्यावरण संतुलन में उपरोक्त कारकों का प्रयोग पर्यावरण शिक्षा तथा मानवाधिकार शिक्षा के रूप में प्रत्येक व्यक्ति को कराया जाये तो निश्चित ही पर्यावरण संतुलन में हमारी एक विशेष भूमिका होगी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

- ऋग्वेद 10.101.1011
- यजुर्वेद 31.04
- श्रीमद्भागवत गीता 03.11.14
- बनरपति शामितारन, यजुर्वेद 28.10
- दिवाकर डॉ0 महेश, पर्यावरण और वाङ्मय, संस्कृति साहित्य में पर्यावरण पृ0 186, 183
- पाण्डेय राम सकल एवं मिश्र करूणाशंकर (1998), भारतीय शिक्षा की समसामयिकी समस्यायें विनोद पुस्तक भण्डार, आगरा।
- दिवेदी डॉ. के. एस. 'मानवाधिकार नई दिशाये (2005)' पर्यावरण - एक मानवाधिकार' पृ. 69- 78 राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, नई दिल्ली।
- मिश्र आर. सी. 'मानवाधिकार नई दिशायें' पर्यावरण के लिए कानूनी संरक्षण, पृ. 100 से 105 , राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, नई दिल्ली ।
- कलसी रीतू, (02 जनवरी 2011) पर्यावरण एवं जल प्रदूषण हरिप्रिया।
- बिसारिया डॉ. पुनीत (04 फरवरी 2010), वेदों में पर्यावरण एवं जल संरक्षण।